श्रीमदादिनाथविरचितायाँ

महाकाल-संहितायाँ

श्रीगुह्यकाल्याः सुधाधारास्तवः



अनुवादकः

पं० श्री राममूर्ति शास्त्री पौराणिकः

(धर्मार्थवितरित्त)



पं० श्री काशीनाथजी मोहले

श्री आदिनाथ-द्वारा विरचित

महाकाल-संहितायां

श्रीगुह्यकाल्याः सुधाधारास्तवः

●

अनुवादक

पं० श्री राममूर्त्ति शास्त्री पौराणिक,

पुराणविभागाध्यक्ष, जो० म० गोयनका संस्कृत महाविद्यालय, वाराणसी

●

प्रकाशक

श्री लक्ष्मीनारायण सेठ,

नीलकंठ, वाराणसी

सं० २०३१ वि०

श्री आदिनाथ-द्वारा विरचित महाकाल-संहितामें देवी गुह्यकालीका यह सुधाधारा-स्तोत्र पंडित श्री काशीनाथजी मोहले कर्मकाण्ड-निष्णातकी मंगल प्रेरणासे श्रीलक्ष्मीनारायण सेठ-द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है ।

विश्वसारतन्त्रमें गुह्यकालीकी उपासनाकी कथा, दीक्षा-प्रणाली और मन्त्रोद्धारका विस्तारसे विवरण दिया हुआ है । उनमें बताया गया है कि इनकी उपासनासे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चतुर्वर्गकी प्राप्ति होती है और चारों पुरुषार्थ सिद्ध हो जाते हैं । गुह्यकाली वे आदि शक्ति हैं जो अपने भक्त साधकका सदा अभीष्ट पूर्ण किया करती हैं । इनकी उपासना करनेवाले साधककी भक्तिमें निरन्तर वृद्धि होती जाती है और अन्तमें उसे मोक्ष भी प्राप्त हो जाता है ।

इनकी उपासनाके लिये जपका यह मन्त्र दिया गया है—

'ॐ क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं गुह्ये कालिके ।'

विश्वसारतन्त्रमें ही लिखा है कि यह मन्त्र किसी तान्त्रिक गुरुसे लेना चाहिए जो आठ बार शिष्यके कानमें यह मन्त्र कह दे । यदि काशी आदि क्षेत्रोंमें, शिवालयमें, तीर्थमें अथवा ग्रहण-कालमें इस मन्त्रकी दीक्षा ली जाय तो किसी प्रकारकी पूजा आदिकी आवश्यकता नहीं होती, केवल आठ बार मन्त्र सुनाना ही पर्याप्त होता है । इन सिद्ध देवीके लिये ही यह सुधाधारास्तव लिखा गया है जिसका पाठ करनेवालेका निश्चय ही कल्याण होगा ।

मैं पुनः उन सज्जनको साधुवाद देता हूँ जो इस महत्त्वपूर्ण ग्रन्थको छपवाकर वितरित करानेका यश अर्जित कर रहे हैं ।

उत्तर बेनिया बाग,
काशी

सीताराम चतुर्वेदी
२२–१०–७४

।। श्रीगुह्येश्वर्यैनमः ।।

।। महाकाल उवाच ।।

अचिन्त्यामिताकार - शक्ति - स्वरूपा
प्रतिव्यक्त्यधिष्ठान - सत्त्वैकमूर्तिः ।
निराकार - निर्द्वन्द्व - बोधैकगम्या
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ।। १ ।।

श्रीगुह्येश्वरी देवीको प्रणाम है ।

महाकालने कहा—देवि ! आपका आकार, आपकी शक्ति और आपका स्वरूप ऐसा निःसीम (अपार) है कि उसकी कोई कल्पना-तक नहीं कर पा सकता । आपकी मूर्ति प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें सत्त्व (आत्म) रूपसे विराजमान है । आप ऐसी आकारहीन और सब प्रकारके द्वन्द्वों (प्रपंचों)-से रहित हैं कि केवल ज्ञानसे ही आपके स्वरूपका ठीक-ठीक बोध हो पाता है । आप तो परब्रह्म-रूपसे ही सिद्ध हैं (आप साक्षात् परब्रह्म ही हैं) ।। १ ।।

अगोत्राकृतित्वा - दनैकान्तिकत्वा-
दलक्ष्यागमत्वा - दशेषाकरत्वात् ।
प्रपंचालसत्वा - दनारम्भकत्वात्
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ २ ॥

आपका न कोई गोत्र है, न आकार है, न आपकी पूर्णताका किसीको ज्ञान है, न आपकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें ही कोई जान पाया है, न आपके सब आकरों (उत्पत्ति-स्थानों)-का ही किसीको ज्ञान है, न आप किसी प्रपंचके फेरमें पड़तीं और न कुछ आरम्भ ही करती हैं क्योंकि आप तो साक्षात् परब्रह्म स्वरूपवाली हैं ॥ २ ॥

असाधारणत्वा-दसम्बन्धकत्वा-
दभिन्नाशयत्वा - दनाकारकत्वात् ।
अविद्यात्मकत्वा-दनाद्यन्तकत्वात्
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ३ ॥

आप असाधारण (अलौकिक) हैं । आपका किसीसे कोई सम्बन्ध नहीं है । आपका सबमें आवास हैं (आप सर्वव्यापिनी हैं) । आपका कोई आकार नहीं है । आप सब विद्याओंसे परे हैं और आपका कोई आदि और अन्त नहीं है क्योंकि आप तो साक्षात् परब्रह्म ही हैं ॥ ३ ॥

यदा नैव धाता न विष्णुर्न रुद्रो
न कालो न वा पंचभूतानि चात्मा ।
तदा कारणीभूत - सत्त्यैकमूर्ति–
स्त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ४ ॥

जब न ब्रह्मा थे, न विष्णु थे, न रुद्र थे, न काल था, न पंचभूत (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश) थे, न आत्मा था, उस समय सबका कारण बनी हुई (सबको उत्पन्न करनेवाली) एक मात्र आपकी ही सत्य-रूपा मूर्ति थी (केवल आपका ही अस्तित्व था)। ऐसी परब्रह्म-रूपा कोई हैं तो एक आप ही हैं ॥ ४ ॥

न मीमांसका नैव काणाद-तर्का
न सांख्या न योगा न वेदान्तवेदाः ।
न देवा विदुस्ते निराकार - भावं
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ५ ॥

देवि ! आपके निराकार भाव (रूप)-को मीमांसक, काणाद (वैशेषिक दर्शनवाले), तर्कवादी (न्यायशास्त्रवाले), सांख्यवादी, योगवादी, वेदान्ती, वेद और देवता कोई भी नहीं जान सका क्योंकि आप तो परब्रह्म-स्वरूपा हैं न ॥ ५ ॥

न ते नामगोत्रे न ते जन्ममृत्यू

न ते धाम-चेष्टे न ते दुःख-सौख्ये ।

न ते मित्र - शत्रू न ते बन्ध - मोक्षौ

त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ६ ॥

न आपका कोई नाम या गोत्र है, न आपका कभी जन्म होता न मृत्यु होती, न आपका कोई धाम है न आपकी कोई चेष्टा (क्रिया) ही है, न आपको दुःख होता न सुख, न आपके शत्रु हैं न मित्र और न आपका बन्ध होता न मोक्ष, क्योंकि आप तो एक मात्र परब्रह्म-स्वरूपा हैं ॥ ६ ॥

न बाला न च त्वं वयस्या न वृद्धा

न च स्त्री न षण्ढः पुमान्नैव च त्वम् ।

न च त्वं सुरी नासुरी किन्नरी वा

त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ७ ॥

न आप बाला हैं, न युवती हैं, न वृद्धा हैं, न स्त्री हैं, न नपुंसक हैं, न पुरुष हैं, न देवी हैं, न आसुरी (राक्षसी) हैं और न किन्नरी हैं । आप तो साक्षात् एक मात्र परब्रह्म-स्वरूपा हैं ॥ ७ ॥

जले शीतलत्वं शुचौ दाहकत्वं
विधौ निर्मलत्वं रवौ तापकत्वम् ।
त्वमेवाम्बिके यस्य कस्यापि शक्ति-
स्त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ८ ॥

अंबिके ! आप ही जलमें शीतलता, अग्निमें दाहकता (जलानेकी शक्ति), चन्द्रमामें निर्मलता और सूर्यमें ताप रूपसे हैं। संसारमें जिस किसीको जो भी शक्ति है वह सब आप ही हैं क्योंकि आप ही एक मात्र परब्रह्म-स्वरूपा हैं ॥ ८ ॥

पपौ क्ष्वेडमुग्रं पुरा यन्महेशः
पुनः संहरत्यन्तकाले जगच्च ।
तवैव प्रसादान्न च स्वस्य शक्त्या
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥ ९ ॥

महेश्वर शिवने जो (समुद्र-मन्थनके समय) प्रचंड विष पी डाला था और फिर अन्तमें जो शिव सब जगत् का संहार कर डालते हैं वह सब काम वे अपनी शक्तिसे नहीं वरन् आपके प्रसादसे ही कर पाते हैं क्योंकि एक मात्र परब्रह्म-स्वरूपा यदि कोई हैं तो आप ही हैं ॥ ९ ॥

करालाकृतीन्याननान्याश्रयन्ती
भजन्ती करेष्वस्त्रबाहुल्यमित्थम् ।
जगत्प्रीणनायासुराणां वधाय
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥१०॥

आप जो अनेक प्रकारकी कराल मुखवाली मूर्तियाँ बना बैठती हैं और हाथमें अनेक अस्त्र उठाए रहती हैं वह आप केवल संसारको प्रसन्न और असुरोंका वध करनेके लिये ही धारण करती हैं । यों आप तो साक्षात् परब्रह्म-स्वरूपा ही हैं ॥ १० ॥

महाचण्ड - योगेश्वरी गुह्यकाली
कराली महाडामरी चंडहासा ।
जगद्ग्रासिनी चंडकापालिनी च
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥११॥

यों तो आपके महाचण्ड-योगेश्वरी, गुह्यकाली, कराली, महाडामरी, चंडहासा, जगद्ग्रासिनी, चंडकापालिनी आदि अनेक नाम हैं, पर वास्तवमें आप तो एक मात्र परब्रह्म-स्वरूपा ही हैं ॥ ११ ॥

रवन्तो शिवाभिर्वहन्ती कपालं
जयन्ती सुरारीन् दमन्ती प्रमत्तान् ।
नटन्ती तपन्ती चलन्ती हसन्ती
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥१२॥

शिवाओं (शिवकी शक्तियों; सियारिनों)-के साथ चिल्लाती हुई, हाथमें कपाल लिए हुई, देवताओंके शत्रुओंको जीतती हुई, दुष्टों का दमन करती हुई, नाचती हुई, ताप देती हुई, चलती और हँसती हुई भी आप एक मात्र परब्रह्म-स्वरूपा ही हैं ॥ १२ ॥

यथा विश्वमेकं रवेरम्बरस्थं
प्रतिच्छायया तावदेवोदकेषु ।
समुद्भासतेऽनेकरूपं तथा वै
त्वमेका परब्रह्मरूपेण सिद्धा ॥१३॥

जैसे आकाशमें चमकनेवाले सूर्यकी प्रतिच्छाया (प्रतिबिम्ब)-से इस एक विश्वके ही अनेक रूप दिखाई देने लगते हैं तथा जलमें सूर्यके भी अनेक रूप दिखाई देने लगते हैं (किन्तु सूर्य तो एक ही है) उसी प्रकार आप भी एक मात्र परब्रह्म-स्वरूपा ही हैं ॥ १३ ॥

अपादापि वाताधिकं धावसि त्वं
श्रुतिभ्यां विहीनाऽपि शब्दं शृणोषि ।
अनासापि जिघ्रस्यनेत्रापि पश्य-
स्यजिह्वाऽपि नानारसस्वाद - विज्ञा ॥१४॥

पैर न होनेपर भी आप वायुसे भी अधिक तीव्र गतिसे दौड़ सकती हैं, कान न होनेपर भी सभी शब्द सुन सकती हैं, नाक न होनेपर भी सब कुछ सूँघ सकती हैं, आँख न होनेपर भी सब कुछ देख सकती हैं और जीभ न होने-पर भी सब रसोंका स्वाद जान पा सकती हैं क्योंकि आप तो एक मात्र परब्रह्मस्वरूपा हैं न ॥ १४ ॥

यथा भ्रामयित्वा मृदं चक्रमध्ये
कुलालो विधत्ते शरावं घटं वा ।
महायन्त्रमध्ये च भूतान्यदृष्टे
सुरान्मानुषाँस्त्वं सृजस्यादिसर्गे ॥ १५ ॥

जैसे कुम्हार अपने चाकपर मिट्टी चढ़ाकर और चाक घुमाकर कसोरे और घड़े बना डालता है वैसे ही आप भी अपने महायन्त्रमें सृष्टिके आरम्भमें देवताओं और मनुष्योंकी ऐसी रचना किया करती हैं जिसे कोई भी प्राणी देख नहीं पाता ॥ १५ ॥

यथारंगरज्ज्वर्कधृष्णिष्वकस्मा-
न्नृणां रौप्यदर्वीकराम्बुभ्रमः स्यात् ।
जगत्यत्र तत्तन्मये तद्वदेव
त्वमेकैव तत्तन्निवृत्तौ समस्तम् ॥ १६ ॥

जैसे राँगेमें चाँदीका, रस्सीमें साँपका और सूर्यकी किरणोंमें जल (मृगजल)-का भ्रम होने लगता है उसी प्रकार संसारमें भी लोगोंको उस-उस वस्तुका भ्रम होता रहता है किन्तु उन सबकी निवृत्ति होनेपर वास्तवमें एक आप ही विश्वरूपमें शेष रहती हैं ॥ १६ ॥

महाज्योतिराकारसिंहासनं यत्
स्वकीयान्सुरान्वाहयस्युग्रमूर्तिः ।
अवष्टभ्य पद्भ्यां शिवं भैरवं च
स्थिता तत्र मध्ये भवस्येव मुख्या ॥ १७ ॥

महाज्योतिके समान प्रकाशमान जो आपका सिंहासन है उसे आप उग्रमूर्ति बनकर अपने देवताओंसे ढुवाती हो और शिव तथा भैरवको पैरों तले दबाकर उस सिंहासनके बीच प्रधान बनकर विराजमान हो जाती हो ॥ १७ ॥

क्व योगासनं योगमुद्रादिनीतिः
क्व गोमायुपोतः क्व कालानलश्च ।
जगन्मातरीदृक् तवापूर्वलीला
कथंकारमस्मद्विधैर्देवि गम्या ॥ १८ ॥

कहाँ तो योगासन लगाकर योगमुद्रा आदि धारण करके आपको प्राप्त करनेका कठिन प्रयास और कहाँ उस कालानल (प्रलयाग्नि)-के सम्मुख सियारका बच्चा। उसी प्रकार हे जगन्माता! हमारे जैसे लोग आपकी अपूर्व लीलाको कैसे समझ पा सकते हैं ॥ १८ ॥

विशुद्धा परा चिन्मयी स्वप्रकाशा-
मृतानन्द - रूपा जगद्व्यापिका च ।
तवेदृग्विधाया निराकारमूर्तेः
किमस्माभिरन्तर्हृदि ध्यायितव्यम् ॥ १९ ॥

माता! आप तो विशुद्धा, परा, चिन्मयी, अपने ही प्रकाशसे प्रकाशित, अमृता, (मोक्षदायिनी) आनन्दरूपा और संसारमें व्याप्त हैं। ऐसी निराकार मूर्तिवाली आपका ध्यान भला हम जैसे लोग अपने हृदयके भीतर कैसे कर पा सकते हैं ॥ १९ ॥

महाघोरकालानल - ज्वालजाला-

हिता त्यक्तवासा महाट्टाट्टहासा।

जटाभारकाला महामुण्डमाला

विशाला त्वमीदृङ् मया ध्यायसेऽम्ब ॥ २० ॥

माता ! आप प्रलयकी महाघोर अग्निकी लपटोंसे घिरी रहती हैं, नग्न रहती हैं, प्रचंड अट्टाहास करती रहती हैं, आपके सिरपर विशाल जटाओंका जूड़ा है और आपके गलेमें विशाल नरमुंड माला पड़ी है। आपके ऐसे (भयंकर) रूपका भला हमसे कैसे ध्यान किया जा सकेगा ॥ २० ॥

तपो नैव कुर्वन्वपुः खेदयामि

व्रजन्नापि तीर्थं पदे खञ्जयामि।

पठन्नापि वेदं जनिं पावयामि

त्वदंघ्रिद्वये मंगलं साधयामि ॥ २१ ॥

मैं न तो तप करके अपना शरीर सुखाता हूँ, न तीर्थोंमें घूमकर अपने पैर ही थकाता हूँ और न वेद पढ़कर अपना जीवन ही पवित्र किया करता हूँ। मैं तो बस आपके चरण-कमलोंमें ही अपना मंगल (कल्याण) साधे चला जा रहा हूँ ॥ २१ ॥

तिरस्कुर्वतोऽन्यामरोपासनां वै
परित्यक्तधर्माध्वरस्यास्य जन्तोः ।
त्वदाराधने न्यस्तचित्तस्य किं मे
करिष्यन्त्यमी धर्मराजस्य दूताः ॥ २२ ॥

मैंने अन्य सब देवताओंकी उपासना दूर कर छोड़ी है, धर्म-यज्ञोंको भी कभीसे छोड़ चुका हूँ, मैं तो बस आपकी आराधनामें ही चित्त एकाग्र किए बैठा हूँ, तब भला यमके दूत मेरा क्या कर लेंगे ॥ २२ ॥

नमस्ये हरिं नैव धातारमीशं
न वह्निं न चार्कं न चेन्द्रादिदेवान् ।
शिवोदीरितानेकवाक्यप्रबन्धै-
स्त्वदर्चाविधिं केवलं किन्तु मन्ये ॥ २३ ॥

मैं विष्णु, ब्रह्मा, शिव, अग्नि, सूर्य, इन्द्र आदि किसी भी देवताके आगे सिर नहीं झुकाता हूँ । मैं तो बस शिवके बताए हुए अनेक वाक्योंके द्वारा जो आपकी अर्चनाकी विधि है केवल उसीको मानता हूँ ॥ २३ ॥

न वा मां विनिन्दन्तु निन्दन्तु नाम
त्यजन्त्वम्ब वा ज्ञातयो मां त्यजन्तु ।
यमीया भटा नारके पातयन्तु
त्वमेका गतिर्मे त्वमेका गतिर्मे ॥ २४ ॥

माता ! चाहे कोई मेरी प्रशंसा करे या निन्दा, मेरी जातिवाले भी मुझे छोड़ना चाहें तो भले छोड़ दें और यमके दूत भी चाहे मुझे नरकमें ही क्यों न ले जा पटकें पर मेरी तो एक मात्र गति (सहायिका) आप ही हैं, आप ही हैं ॥ २४ ॥

महाकालरुद्रोदितं स्तोत्रमेतत्
सदा भक्तिभावेन योऽध्येति भक्तः ।
न चापन्नरोगो न शोको न मृत्यु-
र्भवेत् सिद्धिरन्ते च कैवल्यलाभः ॥ २५ ॥

जो भक्त अत्यन्त भक्तिभावसे इस महाकालरुद्रके बनाए हुए स्तोत्रका सदा पाठ करता रहेगा, उसपर न कोई आपत्ति आवेगी, न उसे कोई कभी रोग होगा, न शोक होगा और न उसको मृत्यु-कष्ट होगा । अन्तमें उसे सिद्धि प्राप्त हो जायगी और वह मुक्त हो जायगा ॥ २५ ॥

इति ते कथितो दिव्यः सुधाधाराह्वयः स्तवः ।
एतस्य सतताभ्यासात् सिद्धिः करतले स्थिता ॥ २६ ॥

यह जो सुधाधार नामका दिव्य स्तोत्र कह सुनाया गया है इसका निरन्तर अभ्यास करते रहनेसे (पढ़ते रहनेसे) सारी सिद्धियाँ हाथमें आ जाती हैं ॥ २६ ॥

॥ इत्यादिनाथविरचितायां महाकालसंहितायां श्रीगुह्यकाल्याः सुधाधाराह्वयः स्तवः सम्पूर्णः ॥

॥ शुभं भूयात् ॥

॥ आदिनाथ-द्वारा विरचित महाकाल-संहितामें गुह्यकालीका सुधाधारा नामक स्तोत्र पूर्ण हुआ ॥

॥ कल्याण हो ॥

सुदर्शन मुद्रक
६३/४२, उत्तर बेनिया बाग, वाराणसी ।